International Journal of Humanities and Social Science Invention (IJHSSI)
ISSN (Online): 2319 – 7722, ISSN (Print): 2319 – 7714
www.ijhssi.org ||Volume 12 Issue 9 || September 2023 || PP. 283-2865

स्वामी विवेकानन्द का शिक्षा–दर्शन

डॉ0 प्रद्युम्न कुमार मिश्र (शिक्षक)
एबी रिच इण्टर कॉलेज, शाहजहाँपुर
mishrapk.aric@gmail.com

शिक्षा–दर्शनः– स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा मनुष्य के अन्तर्निहित गुणों का प्रकटीकरण करती है। मानव में कुछ शक्तियां जन्मजात होती हैं, शिक्षा उन्हीं शक्तियों या गुणों का विकास करती है। सभी प्रकार का ज्ञान मनुष्य के मन मस्तिष्क में विद्यमान होता है, जैसे– गुरुत्वाकर्षण का सिद्धान्त न्यूटन के मस्तिष्क में पहले से ही विद्यमान था, वह तो केवल उचित समय की प्रतीक्षा कर रहा था। पेड़ से सेव गिरने पर न्यूटन ने कुछ अनुभव किया और उसने अपने मस्तिष्क में पहले से विद्यमान विचारों को व्यवस्थित करके और उसमें एक नया विचार जोड़ा जिसे हम गुरुत्वाकर्षण का नियम कहते हैं।

विश्व का असीम ज्ञान भण्डार मनुष्य के मस्तिष्क में विद्यमान है, परन्तु यह आवरण से ढका रहता है और शिक्षा के द्वारा जैसे–जैसे यह आवरण हटता है तो मनुष्य कहता है, ''मुझे ज्ञान हो रहा है।''जब तक यह आवरण मनुष्य के मन मस्तिष्क पर पड़ा रहता है तब तक वह मूढ़ या अज्ञानी रहता है। जिस दिन यह आवरण बिलकुल हट जाता है वह सर्वज्ञानी बन जाता है।

स्वामी विवेकानन्द मनुष्य का सर्वांगीण विकास करने वाली शिक्षा के पक्षधर थे। वे शिक्षा को मानव कल्याण का मूल तथा धर्म से जुड़ा मानकर उसे सर्वसुलभ बनाना चाहते थे। उन्होंने शिक्षा का एक उदार और सन्तुलित रूप प्रस्तुत करते हुए कहा कि युवकों को धार्मिक शिक्षा के साथ–साथ पाश्चात्य अंग्रेजी और विज्ञान की भी शिक्षा दी जाए ताकि वे व्यवसायिक और तकनीकी शिक्षा के द्वारा स्वरोजगार करके अपनी जीविका के लिए धनोपार्जन कर सकें, जिससे उन्हें नौकरी की खोज में इधर–उधर भटकना न पड़े।

स्वामी विवेकानन्द ज्ञान दान को सबसे श्रेष्ठ मानते हैं। उन्होंने चार प्रकार के दान बताए धर्म दान, ज्ञान दान, प्राण दान, और अन्न दान। उन्होंने प्रथम दो दानों को श्रेष्ठ मानते हुए कहा कि ज्ञान को सीमाओ में नहीं बांधा जाना चाहिए अर्थात वे ज्ञान को सर्वव्यापी और सर्वसुलभ बनाकर इसे भारत के बाहर भी ले जाना चाहते हैं। स्वामी जी आध्यात्मिक ज्ञान और लौकिक ज्ञान दोनों पर बल देते हुए कहते हैं,''यदि लौकिक विद्या बिना धर्म के ग्रहण करना चाहो तो मैं तुम से साफ कह देता हूँ कि भारत में तुम्हारा ऐसा प्रयास व्यर्थ जाएगा वह लोगों के हृदय में स्थान नहीं प्राप्त कर सकेगा।''

स्वामी विवेकानन्द भारतीयों में आत्मविश्वास भरने के लिए आत्मतत्व का ज्ञान देना चाहते हैं। वे कहते हैं,''आत्मा वह है जो न कभी मरती है, न जन्म लेती है, जिसे न तलवार काट सकती है, न आग जला सकती है और न हवा सुखा सकती है, वह तो अमर है, अनादि है और अनन्त है।''इस प्रकार वे शिक्षा के द्वारा आत्म साक्षात्कार कराना चाहते हैं।

स्वामी विवेकानन्द अन्धविश्वास और तांत्रिक विद्या की आलोचना करते हुए कहते हैं कि इन्होंने मानव के विवेक को समाप्त कर दिया।वे आदर्श शिक्षा व्यवस्था की कल्पना करते हुए कहते हैं,''हमें ऐसी सर्वांगसम्पन्न शिक्षा चाहिए जो हमें मनुष्य बना सके।''वे सूचनाओं के संग्रह को शिक्षा नहीं मानते, वे कहते हैं,''शिक्षा कोई सूचनाओं का समूह नहीं है जिसे मस्तिष्क में भरकर जीवन भर सड़ने के लिए छोड़ दिया जाए। हमें तो भावों और विचारों को इस प्रकार आत्मसात करना चाहिए जिससे जीवन का निर्माण हो, मानवता तथा चारित्रिक गुणों का विकास हो। यदि शिक्षा और सूचनाएँ एक वस्तु होती तो पुस्तकालय सबसे बड़े ऋषि बन जाते।''

शिक्षा का उद्देश्यः– स्वामी विवेकानन्द व्यक्ति, समाज और राष्ट्र के विकास के साथ–साथ विभिन्न प्रकार की समस्याओं के निराकरण के लिए शिक्षा को आवश्यक मानते हैं। वे कहते हैं,''जो शिक्षा प्रणाली जनसमूह को जीवन संघर्ष से जूझने की क्षमता प्रदान करने में सहायक नहीं होती जो मनुष्य के नैतिक बल का, उसकी सेवावृत्ति का, उसमें सिंह के समान साहस का विकास नहीं करती, वह भी क्या शिक्षा के नाम के योग्य है।''

स्वामी जी ने शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य बताए–

1. **अन्तर्निहित पूर्णता की अभिव्यक्तिः–** स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शिक्षा का सबसे महत्वपूर्ण उद्देश्य मानव में अन्तर्निहित शक्तियों का विकास करना है। वेदांत दर्शन के अनुसार प्रत्येक बालक में अनन्त ज्ञान एवं अनन्त व्यापकता की शक्तियां विद्यमान होती हैं, परन्तु वह इन सब से अनभिज्ञ होता है। शिक्षा का उद्देश्य बालक में विद्यमान ज्ञान और शक्तियों से अवगत कराना व उनका उत्तरोत्तर विकास करना है।
2. **मानव–निर्माण करनाः–** स्वामी विवेकानन्द ने शिक्षा का दूसरा प्रमुख उद्देश्य मानव का निर्माण करना बताया। वे कहते हैं,''शिक्षा द्वारा मनुष्य का निर्माण किया जाता है। समस्त शिक्षाओं का अन्तिम लक्ष्य मानव का विकास करना है। जिस शिक्षा द्वारा मनुष्य की संकल्प–शक्ति का प्रवाह संयमित होकर प्रभावोत्पादक बन सके उसी का नाम शिक्षा है।''
3. **शारीरिक पूर्णताः–** स्वामी विवेकानन्द के अनुसार शारीरिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति ही पूर्णता को प्राप्त कर सकता है। वे कहते हैं,''सबसे पहले युवकों को अपने स्वास्थ्य पर ध्यान देना चाहिए। शारीरिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति गीता पढ़ने की बजाय फुटबॉल खेलकर भी ईश्वर के अधिक निकट पहुंच सकता है और शास्त्रों व आत्मा की महत्ता को अच्छी तरह समझ सकता है।''
4. **चरित्र का निर्माणः–** स्वामी विवेकानन्द उच्च चारित्रिक गुणों का विकास करने वाली शिक्षा को अधिक बेहतर मानते हैं। उनके अनुसार एक सशक्त राष्ट्र के निर्माण के लिए उसके नागरिकों का चरित्रवान होना आवश्यक है। वे कहते हैं,''किसी भी राष्ट्र की उन्नति और सुरक्षा उसके चरित्रवान नागरिकों पर निर्भर करती है।''अतः शिक्षा का एक महत्वपूर्ण कार्य विद्यार्थियों में उच्च चारित्रिक गुणों का विकास करना है।
5. **भावी जीवन की तैयारीः–** स्वामी विवेकानन्द विद्यार्थियों को भावी जीवन के लिए तैयार करना चाहते हैं। इसके लिए वे विज्ञान और तकनीकी शिक्षा को आवश्यक मानते हैं। वे कहते हैं,''आज की इस उच्च शिक्षा के बजाय विद्यार्थियों को तकनीकी शिक्षा का ज्ञान देना चाहिए जिससे वह नौकरी की खोज में इधर–उधर भटकने के बदले किसी काम में लग कर अपना जीविकोपार्जन कर सकें।''
6. **राष्ट्रीयता की भावना का विकास**ः– स्वामी जी भारत की दुर्दशा से अत्यन्त मर्माहत थे।वे ऐसी शिक्षा व्यवस्था विकसित करना चाहते थे, जो भारतीयों में राष्ट्रीयता की भावना का विकास कर सके। वे कहते हैं, सभी को एक होकर गर्व से कहना चाहिए प्रत्येक भारतवासी मेरा भाई है, भारतवासी मेरे प्राण है, भारत के देवी देवता मेरे ईश्वर है, भारत का समाज मेरा बचपन का झूला जवानी की फुलवारी और बुढ़ापे की काशी है।''इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के द्वारा भारतीयों में राष्ट्र के प्रति प्रेम और समर्पण की भावना का विकास करना चाहते थे।

पाठ्यक्रमः– किसी भी राष्ट्र की पहचान उसके नागरिकों के कुछ विशेष गुणों के कारण होती है। भारत की पहचान उसकी आध्यात्मिकता है। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ''धर्म शिक्षा की आत्मा है।''स्वामी विवेकानन्द की धर्म की परिभाषा अत्यन्त व्यापक है।वे धर्म के अन्तर्गत किसी सम्प्रदाय विशेष को नहीं रखते हैं। वे धर्म को नैतिक जीवन पद्धति से जोड़ते हैं।वे अधर्म के विस्तार का कारण पाश्चात्य शिक्षा को मानते हैं। वे कहते हैं,''आत्मा और हृदय का विकास मनुष्य को आध्यात्मिक बनाता है और मात्र बौद्धिक विकास उसे स्वार्थी बना देता है।''

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा में अध्यात्म के साथ विज्ञान और तकनीकी शिक्षा को भी आवश्यक मानते हैं उनका मानना है कि भारतीय अध्यात्म और पश्चिमी विज्ञान व तकनीक का समन्वय मानव कल्याण का एक विश्वसनीय आधार बन सकता है। वे कहते हैं, कि आधुनिक विज्ञान और तकनीकी शिक्षा ने मानव जीवन को आरामदायक बनाया है, पर यदि इसका विकास बगैर आध्यात्मिक समन्वय के साथ हुआ तो यह मानव के विनाश का कारण बन सकता है। जैसा कि द्वितीय विश्व युद्ध के समय हुआ था।

स्वामी विवेकानन्द अपनी शिक्षा व्यवस्था में कला को भी महत्वपूर्ण स्थान देते हैं। वे कहते हैं,''कला हमारे धर्म का ही एक अंग है।''उन्होंने विद्यार्थियों, शिक्षकों और शिक्षाशास्त्रियों का ध्यान विभिन्न प्रकार के आकर्षक वस्त्रों आदि से लेकर किसानों की झोपड़ियों, अनाज भरने के कोठारों और मिट्टी के बने खिलौनों तक खींचा। उन्हें मानव जीवन का हर आयाम कलात्मक दिखाई देता था और वे कला को शिक्षा का महत्वपूर्ण भाग मानते थे।

स्वामी विवेकानन्द भाषा की शिक्षा को लेकर भी अत्यधिक गम्भीर थे। वे संस्कृत भाषा की शिक्षा पर बल देते हुए कहते हैं, यही हमारे धर्म और संस्कृति की भाषा है। इसके साथ ही वे मातृभाषा की शिक्षा को भी आवश्यक मानते हैं

क्योंकि इसके बिना हम अपने समाज से नहीं जुड़े रह सकते है। विज्ञान और तकनीक की उचित शिक्षा के लिए वे अंग्रेजी शिक्षा को भी महत्वपूर्ण मानते थे।

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा के प्रसार के लिए शिक्षा व्यवस्था में शारीरिक शिक्षा, खेलकूद और व्यायाम को भी आवश्यक बताते हुए युवाओं को गीता पढ़ने के बजाय फुटबॉल खेलने का सुझाव देते हैं। उनका मानना है कि यदि शरीर स्वस्थ है तो गीता भी अच्छे ढंग से समझ में आएगी। वे शक्ति का महत्व बताते हुए कहते हैं,''शक्ति जीवन है और कमजोरी मृत्यु है।''

इस प्रकार स्वामी विवेकानन्द ने अपने पाठ्यक्रम को प्राचीन धर्म, दर्शन और भाषा तथा पश्चिमी ज्ञान–विज्ञान, तकनीक एवं औद्योगिक प्रशिक्षण को भी स्थान दिया है। वे महसूस करते हैं कि पाश्चात्य जगत के भौतिक ज्ञान से हम अपना भौतिक विकास कर सकते हैं, साथ ही अपने देश के आध्यात्मिक ज्ञान से पश्चिमी जगत का कल्याण भी कर सकते हैं। इससे यह स्पष्ट होता है कि पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में स्वामी विवेकानन्द का दृष्टिकोण आधुनिक और व्यापक होने के साथ–साथ समन्वयवादी था।

शिक्षण–विधिः– स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ज्ञान प्राप्त करने का सबसे अच्छा तरीका एकाग्रता है। वे कहते हैं कि जितनी अधिक एकाग्रता होगी उतना ही अधिक ज्ञान प्राप्त होगा। उनका कहना था कि एकाग्रता के बल पर जूता पॉलिश करने वाला भी अच्छे ढंग से पालिश कर सकेगा और खाना बनाने वाला रसोईया अधिक अच्छा भोजन बना सकेगा।

मनुष्य में एकाग्रता अनासक्ति अर्थात् अनुराग के अभाव में आती है। स्वामी विवेकानन्द का कहना है, कि सूचनाओं का संग्रह शिक्षा नहीं है। सच्ची शिक्षा के लिए शरीर को अनासक्ति द्वारा एकाग्र करना होगा। एकाग्रता द्वारा ही ज्ञान प्राप्ति से सभी प्रकार की समस्याओं को समझकर उनके निराकरण का रास्ता खोजा जा सकता है।

स्वामी विवेकानन्द भौतिक और आध्यात्मिक दोनों प्रकार के ज्ञानार्जन के लिए योग विधि को उत्तम बताते हैं। उनका कहना है कि भौतिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए जहां अल्प योग अर्थात अल्पकालिक एकाग्रता पर्याप्त है वहीं आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्त करने के लिए पूर्ण योग अर्थात दीर्घकालिक एकाग्रता आवश्यक है।

स्वामी विवेकानन्द कहते हैं कि शिक्षा प्राप्त करना प्रत्येक बालक–बालिका का जन्मसिद्ध अधिकार है वे कहते हैं कि यह देश के खोए हुए सांस्कृतिक और भौतिक वैभव को पुनः प्राप्त करने के लिए प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित करना आवश्यक है। वे शिक्षा की व्यवस्था सभी के लिए समान रूप से उपलब्ध कराना चाहते थे। विवेकानन्द का दर्शन मानव जाति के कल्याण के लिए है। वे कहते थे,''हम मानव निर्माण का धर्म चाहते हैं। हम मनुष्य का निर्माण करने वाले सिद्धान्त चाहते हैं और हम मानव निर्माण की सर्वांगीण शिक्षा चाहते हैं।''

शिक्षक का दायित्वः– स्वामी विवेकानन्द जनसमूह के लिए सर्वसुलभ शिक्षा के पक्षधर हैं। वे कहते हैं कि शिक्षक का कार्य शिक्षार्थी के मार्ग से बाधाओं को दूर करना हैं, उसको हांकना नहीं है क्योंकि व्यक्ति में ब्रह्मत्व की शक्ति पहले से ही विद्यमान है, शिक्षा के द्वारा उसे बाहर निकालना है। वे कहते हैं भारत में सदैव से ही विद्या दान को श्रेष्ठ माना गया है और यह दान दानी पुरुषों के द्वारा ही होता है। अतः शिक्षा के प्रसार का दायित्व त्यागी और निस्वार्थी पुरुषों को दिया जाना चाहिए। शिक्षकों को नाम, धन और यश को प्राथमिकता न देकर निस्वार्थ भाव से शिक्षण कार्य करना चाहिए। उनका मानना है कि शिक्षण में स्वार्थ का भाव आ जाने से इसके वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति नहीं होती है।

स्वामी विवेकानन्द शिक्षा में गुरुकुल व्यवस्था का समर्थन करते हैं। उनका विचार था कि विद्यालयों का वातावरण और पर्यावरण गुरुकुल की भाँति शुद्ध होना चाहिए जहाँ पर उचित शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक विकास के लिए व्यायाम, खेलकूद, भजन–कीर्तन तथा ध्यान योग की व्यवस्था होनी चाहिए। वे कहते हैं,''मेरे विचार के अनुसार शिक्षा का अर्थ है गुरुकुल–वास। शिक्षक के व्यक्तिगत जीवन के बिना कोई शिक्षा हो ही नहीं सकती। जिनका चरित्र जाज्वल्यमान अग्नि के समान हो ऐसे व्यक्ति के सहवास में शिष्य को बाल्यावस्था के आरम्भ से ही रहना चाहिए, जिससे कि उच्चतम शिक्षा का सजीव आदर्श शिष्य के सामने रहे।''

शिक्षार्थी के कर्तव्यः– स्वामी विवेकानन्द बालकों को आदर्श नागरिक बनाना चाहते हैं, इसके लिए वे विद्यार्थियों से नियमों के पालन और आत्म संयम पर बल देते हैं। उनके अनुसार ''शिक्षक के प्रति श्रद्धा, विनम्रता, समर्पण तथा सम्मान की भावना के बिना हमारे जीवन में कोई विकास नहीं हो सकता। उन देशों में जहाँ शिक्षक–शिक्षार्थी सम्बन्धों में उपेक्षा बरती

गई है, वहाँ शिक्षक एक व्याख्याता मात्र रह गया है। वहाँ शिक्षक अपने लिए पाँच डॉलर की आशा रखने वाले और छात्र–शिक्षक के व्याख्यान को अपने मस्तिष्क में भरने वाले रह जाते हैं। इतना कार्य सम्पन्न होने पर दोनों अपने–अपने रास्ते पर चल देते हैं। इससे अधिक उनमें कोई सम्बन्ध नहीं रह गया है।''

स्वामी विवेकानन्द विद्यार्थी जीवन में ब्रह्मचर्य पालन पर बल देते हैं। उनके अनुसार ''इस अवधि में विद्यार्थी को मन, वचन और कर्म से ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए इससे संकल्प शक्ति दृढ़ होती है तथा आध्यात्मिकता और वाग्मिता का विकास होता है।''

स्त्री शिक्षाः– स्वामी विवेकानन्द स्त्री तथा पुरुष को समान भाव से देखते हैं, इसलिए वह स्त्री शिक्षा को उतना ही महत्वपूर्ण मानते हैं जितना पुरुषों की शिक्षा को। वह मठों और आश्रमों के माध्यम से स्त्रियों को शिक्षित करना चाहते हैं। वे कहते हैं, ''शिक्षित स्त्रियां अच्छे और बुरे को भली प्रकार समझ सकेंगी और उनमें से अच्छाई का चयन कर सकेंगी।''

वे कहते हैं,''जिस तरह माता–पिता अपने पुत्रों को शिक्षा देते हैं, उसी तरह पुत्रियों को भी शिक्षित करना चाहिए। जबकि हम उन्हें प्रारम्भ से ही दूसरे पर निर्भर रह कर परतंत्र रहने की शिक्षा देते हैं।''वे लड़कियों को आत्मनिर्भर और विवेकी बनाना चाहते हैं ताकि वे अपने निर्णय लेने के योग्य बने और अपनी समस्याओं का समाधान स्वयं खोज सकें। वे लड़कियों को धार्मिक शिक्षा के साथ–साथ भाषा, गणित, विज्ञान, इतिहास, गृह व्यवस्था, शिल्प तथा पाककला आदि की भी शिक्षा का सुझाव देते हैं।

शिक्षा का प्रसारः– स्वामी विवेकानन्द राष्ट्र और समाज की समस्याओं का समाधान शिक्षा में देखते थे, इसलिए वे शिक्षा को सर्वसुलभ बनाकर समाज के प्रत्येक व्यक्ति को शिक्षित करना चाहते थे। शिक्षा के प्रसार के लिए वे भ्रमणकारी सन्यासियों को उचित माध्यम मानते हैं। स्वामी विवेकानन्द के अनुसार ''हमारे देश में एकनिष्ठ और त्यागी साधु हैं जो गांव–गांव धर्म की शिक्षा देते फिरते हैं। यदि इनमें से कुछ लोगों को शैक्षिक विषयों में भी प्रशिक्षित किया जाए तो गांव–गांव दरवाजे जाकर वे न केवल धर्म की शिक्षा देंगे बल्कि सांसारिक शिक्षा भी देंगे।''यह साधुजन विभिन्न देशों से सम्बन्धित जानकारियां कहानियों के माध्यम से लोगों को दे सकते हैं। इस तरह से जनसामान्य को सरलता से शिक्षित किया जा सकता है।

स्वामी जी हर नागरिक को निशुल्क शिक्षा देने का सुझाव देते हैं। उनका मानना था कि अशिक्षित लोगों को साक्षर बनाने की बजाय उन्हें जीवनोपयोगी और रोजगारपरक शिक्षा देना अधिक आवश्यक है। अतः वे औपचारिक और अनौपचारिक दोनों प्रकार की शिक्षा पर बल देते हैं।

स्वामी जी ने जनसेवा और शैक्षिक उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए सन 1897 ईसवी में रामकृष्ण मठ की स्थापना की। मठ के द्वारा उनके विचारों के प्रचार–प्रसार के लिए अनेक शैक्षणिक संस्थानों की स्थापना की गई जो स्वामी जी के सपनों को साकार करने की दिशा में उत्तरोत्तर प्रयासरत है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचीः–

1. लक्ष्मीलाल के.ओड़ (1983). शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि.जयपुरः राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी।
2. राजेंद्र प्रकाश गुप्त (1997). स्वामी विवेकानन्द व्यक्ति और विचार.नई दिल्लीः राधा पब्लिकेशन्स।
3. स्वामी निर्वेदानन्द (1956). ऑवर एडुकेशन.कलकत्ताः रामकृष्ण मिशन।
4. रामशकल पाण्डेय (1999). विश्व के श्रेष्ठ शिक्षा शास्त्री.आगराः विनोद पुस्तक मन्दिर।
5. स्वामी विवेकानन्द (1982). मेरी समरनीति. नागपुरः रामकृष्ण मठ (पंडित सूर्यकान्त त्रिपाठी 'निराला' द्वारा अनुवादित)।
6. स्वामी विवेकानन्द (2004). एडुकेशन. मद्रासः श्री रामकृष्ण मठ(टी.एस. अविनाशलिंगम द्वारा सम्पादित)।